सेठ भोलाराम सेकसरिया-स्मारक ग्रन्थमाला—३

महावीर प्रसाद द्विवेदी
और
उनका युग

लेखक—

डॉ० उदयभानु सिंह एम० ए०, पीएच० डी०

प्रकाशक—

लखनऊ विश्वविद्यालय

कृतज्ञता-प्रकाश

श्रीमान् सेठ शुभकरन जी सेकसरिया ने लखनऊ विश्व-विद्यालय की रजत—जयन्ती के अवसर पर बिसवाँ-शुगर-फैक्टरी की ओर से बीस सहस्र रुपये का दान देकर हिन्दी-विभाग की सहायता की है। सेठ जी का यह दान उनके विशेष हिन्दी-अनुराग का द्योतक है। इस धन का उपयोग हिन्दी में उच्चकोटि के मौलिक एवं गवेषणात्मक ग्रन्थों के प्रकाशन के लिए किया जा रहा है जो श्री सेठ शुभकरन सेकसरिया जी के पिता के नाम पर 'सेठ भोलाराम सेकसरिया स्मारक ग्रन्थमाला' में संग्रथित हो रहे हैं। हमें आशा है कि यह ग्रन्थमाला हिन्दी-साहित्य के भण्डार को समृद्ध करके ज्ञानवृद्धि में सहायक होगी। श्री सेठ शुभकरन जी की इस अनुकरणीय उदारता के लिए हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

दीनदयालु गुप्त
अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय।
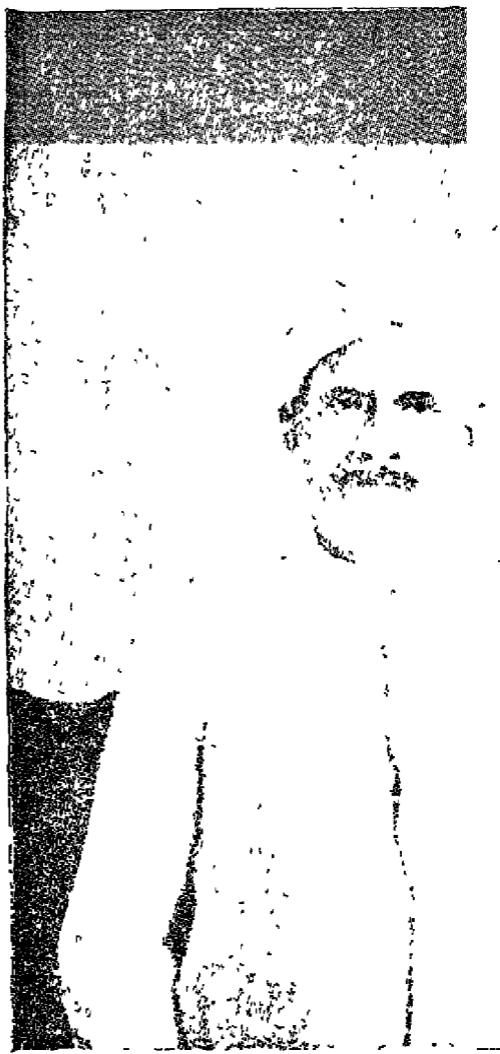
स्वर्गीय सेठ भोलाराम सेकसरिया

उपोद्घात

आधुनिक हिन्दी भाषा के निर्माण में सबसे प्रथम महत्वशाली कार्य भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने किया था। उनके समय तक खड़ी बोली हिन्दी गद्य की भाषा बन चुकी थी परन्तु पद्य में उसका प्रयोग बहुत अल्प था। भारतेन्दु ने अपनी अधिकांश पद्य-रचनाएँ ब्रजभाषा में ही की थीं। उनकी कुछ रचनाएँ नागरी लिपि में लिखी हुई सरल रेखता अथवा उर्दू-शैली में भी हैं। गद्य में उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी का ही प्रयोग किया है। भारतेन्दु काल में, भारतेन्दु के प्रोत्साहन से और भी अनेक लेखक हुए जिन्होंने आधुनिक हिन्दी भाषा का निर्माण किया, जैसे पं० प्रताप नारायण मिश्र, पं० बदरी नारायण 'प्रेमघन', पं० बालकृष्ण भट्ट, बा० बालमुकुन्दगुप्त, ला० श्रीनिवास दास, ठा० जगमोहन सिंह, बा० तोताराम आदि। इन साहित्य-निर्माताओं ने भी पद्य में ब्रजभाषा का तथा गद्य में खड़ी बोली का प्रयोग किया। इनकी भाषा में पृथक पृथक रूप से निजी गुण थे।। पं० प्रताप नारायण मिश्र की भाषा में मनोरंजकता, जनबोलियों की सरलता, और व्यंग्यात्मकता थी। 'प्रेमघन' जी, आलंकारिकता, अर्थगाम्भीर्य और समास-पदावली के साथ लिखते थे। पं० बालकृष्ण भट्ट की भाषा सरल घरेलू शब्दों और व्यंग्यात्मक चुटकियों से युक्त होती थी। उस समय गद्य की अनेक प्रयोगात्मक शैलियाँ थीं। उस समय के साहित्यिक जीवन की प्रेरक और मार्गविधायिनी शक्ति भारतेन्दु के रूप में प्रकट हुई थी। भारतेन्दु का जीवनकाल बहुत अल्प रहा और उनका काम अधूरा ही रह गया। गद्यका प्रसार तो भारतेन्दु के प्रयास से हुआ परन्तु भाषा की उस समय, निश्चित, व्याकरण-सम्मत, और पुष्टशैली न बन पाई थी। अंग्रेजी भाषा का प्रभाव हिन्दी-शैली पर अव्यवस्थित रूप में ही पड़ रहा था।

हिन्दी भाषा और साहित्य की उक्त पृष्ठभूमि में पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी (सन् १९०३ में) साहित्य-क्षेत्र में आए और उन्होंने इंडियन प्रेस में सरस्वती का सम्पादन अपने हाथ में लिया। उनका साहित्य-क्षेत्र में आना, हिन्दी खड़ीबोली के इतिहास में एक युगान्तर उपस्थित करनेवाली घटनाहुई थी। उनका आगमन मानो हिन्दी साहित्य-कानन में बसन्त का आगमन था। उस समय साहित्यिक जीवन में एक नवीन स्फूर्ति आ गई। उन्होंने लेखक और भाषा-शिक्षक दोनों रूपों में साहित्य की सेवा की। इतना ही नहीं सम्पादक हिन्दी भाषा-प्रचारक गद्य

और पद्य भाषा के परिष्कारक, निबन्धकार, आलोचक कवि शिक्षक अनेक रूपों में उनकी प्रतिभा का प्रसार हुआ। द्विवेदी जी ने खड़ी बोली को पद्य-क्षेत्र में भी आगे बढ़ाया। वे स्वयं बड़े कवि न थे और न बड़े उपन्यासकार और न नाटककार ही। अनुभूति की व्यापकता और गहनता, कल्पना की सूझ तथा विचारों की गम्भीरता की भी द्योतक उनकी रचनाएँ नहीं हैं।। फिर भी द्विवेदी जी की कृतियो में प्रेरक शक्ति है, जीवन का सम्पर्क है और सुधारक तथा प्रचारक की सच्ची लगन है। ये ही विशेषताएँ उनकी रचनाओं को गौरव और महत्व देती हैं।

हिन्दी साहित्य-क्षेत्र मे द्विवेदी जी का इतना प्रभाव पड़ा कि उनकी साहित्य-सेवा का काल (१६०१ ई० से १६२० ई० तक) 'द्विवेदीयुग' के नाम से प्रख्यात हो गया। यह समय उस हिन्दी भाषा के विकास और उत्कर्षोन्मुखता का समय था जो आज भारत की राष्ट्र-भाषा है। भाषा और काव्य को एक नये पथ की ओर प्रगति के साथ चलाने वाले सारथी-रूप में द्विवेदी जी का कार्य महान है। वे वस्तुतः युगान्तरकारी सूत्रधार हैं। राष्ट्रकवि मैथिली-शरण गुप्त, डा० गोपालशरण सिंह, पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय, श्रीधर पाठक, 'सनेही', पूर्ण, शंकर, सत्यनारायण कविरत्न आदि कवि और अनेक गद्यकार, सभी ने द्विवेदी जी से विषय, छन्द-प्रयोग और भाषागत प्रेरणा तथा शिक्षा ली थी। सरस्वती की फाइलों को देखने से पता चलता है कि इस महारथी ने विवेचनात्मक, आलोचनात्मक, परिचयात्मक, आवेशात्मक, विनोद, व्यंग, अनेक प्रकार की गद्यशैलियों का अपने गद्य में प्रयोग किया। अपने लेखों द्वारा विविध गद्यशैलियों के उदाहरण उपस्थित किये और शब्द और मुहाविरों के प्रयोग द्वारा भाषा के दोषों का परिहार किया। इस प्रकार उन्होंने एक प्रांजल भाषा का आदर्श रूप लेखको के सम्मुख उपस्थित किया।

वास्तव में, द्विवेदी जी की कृतियों और उनके 'रेनेसाँ' युग के अध्ययन के बिना आधुनिक हिन्दी साहित्य के विकास का ज्ञान अधूरा ही रहता है। जिस समय मैंने 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग' नामक विषय प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखक डा० उदयभानु सिंह को दिया, उस समय तक उक्त विषय का किसी लेखक ने गम्भीर अध्ययन नहीं किया था। डा० उदयभानु सिंह ने इस विषयकी बिखरी हुई सामग्री को बड़े परिश्रम के साथ इकट्ठा किया और उसे एक व्यवस्थित और मौलिक निबन्ध रूप मे प्रस्तुत किया, जो इस विश्व-विद्यालय में, पीएच० डी० की उपाधि के लिये स्वीकृत हुआ। यह ग्रन्थ लेखक के अथक परिश्रम और विस्तृत अध्ययन का प्रतिफल है डा० सिंह मेरी बधाई और शुभेच्छा के पात्र

हैं इनकी सबल लेखनी स और भी महत्वपूण ग्र था का सृजन होगा एसा मरी मगल कामना ह।

दीनदयालु गुप्त,

डॉ० दीनदयालु गुप्त
एम्० ए०, एलएल० बी०, डी० लिट्०
प्रोफ़ेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय

प्राक्कथन

आधुनिक हिन्दी-साहित्य की चार मुख्य विशेषताएँ हैं—

१. काव्यभाषा के रूप में खड़ीबोली की प्रतिष्ठा और कविता के विषय, छन्द, विधान तथा अभिव्यंजनाशैली मे परिवर्तन,

२. गद्यभाषा के व्याकरणसंगत, संस्कृत और परिष्कृत रूप का निश्चित निर्माण,

३. पत्रपत्रिकाओं और उनके साथ ही सामयिक साहित्य का विकास,

४. हिन्दी-साहित्य के विविध अंगो—कविता, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, नाटक, आलोचना, गद्यकाव्य आदि—की वृद्धि और पुष्टि।

इन सबका प्रधान श्रेय पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी को ही है और इसीलिए उनकी साहित्य-सेवा का मूल्याकन हिन्दी के लिए गौरव का विषय है।

द्विवेदी जी की जीवनी और साहित्य-सेवा के विषय में 'हस' के 'अभिनन्दनाक', 'बालक' के 'द्विवेदी-स्मृति-अंक', 'द्विवेदी- अभिनन्दन-ग्रन्थ', 'साहित्य-संदेश' के 'द्विवेदी-अंक', 'सरस्वती' के 'द्विवेदी-स्मृति-अंक' और 'द्विवेदी-मीमासा' तथा पत्रपत्रिकाओं में बिखरे लेखों में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। परन्तु, उनमे प्रकाशित प्रायः सभी लेख प्रशंसात्मक और श्रद्धाजलि के रूप में लिखे गए हैं। समालोचना की दृष्टि से उनका विशेष मूल्य नहीं है। अतएव द्विवेदी जी की जीवनी, हिन्दी-साहित्य को उनकी देन और उनके निर्मित युग की वास्तविक आलोचना की आवश्यकता प्रतीत हुई।

द्विवेदी जी से सम्बन्धित प्रायः समस्त सामग्री काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा और दौलतपुर में रक्षित है। नागरी-प्रचारिणी सभा के कार्यालय में द्विवेदी-सम्बन्धी २८०१ पत्र और सभा को भेजा गया उनका हस्तलिखित 'वक्तव्य' है। सभा के 'आर्यभाषा-पुस्तकालय' मे उनकी दस आलमारी पुस्तकें और हिन्दी, संस्कृत, बंगला, मराठी, गुजराती, उर्दू तथा अंगरेजी की सैकड़ों पत्रिकाओं की फुटकर प्रतियाँ हैं। सभा के कलाभवन में 'सरस्वती' की प्रकाशित और अप्रकाशित हस्तलिखित प्रतियाँ, उनसे सम्बन्धित पत्र, अनेक पत्रपत्रिकाओं की कतरनें, द्विवेदी जी का अप्रकाशित 'कौटिल्यकुठार' और उनके प्रकाशित ग्रन्थों की हस्तलिखित प्रतियाँ हैं। दौलतपुर में 'सरस्वती' की कुछ प्रकाशित और अप्रकाशित प्रतियाँ द्विवेदी जी से सम्बन्धित कागदपत्र पत्र और उनके अप्रकाशित 'तरुणोपदेश' और 'सोहागरात' हैं

प्रस्तुत ग्रन्थ में ९ अध्याय हैं —

१. भूमिका

२. चरित और चरित्र

३. साहित्यिक संस्मरण और रचनाएँ

४. कविता

५. आलोचना

६. निबन्ध

७. 'सरस्वती'-सम्पादन

८. भाषा और भाषासुधार

९. युग और व्यक्तित्व

पहले अध्याय में ग्रथित वस्तु का अधिकांश परार्जित है। वस्तुतः अभिव्यंजना-शैली ही अपनी है। दूसरे अध्याय में प्रकाशित लेखों और पुस्तकों के अतिरिक्त द्विवेदी जी की हस्तलिखित संक्षिप्त जीवनी (काशी-नागरी- प्रचारिणी सभा के कार्यालय में रक्षित) और उनसे संबंधित पत्रों तथा पत्रपत्रिकाओं के गवेषणात्मक अध्ययन के आधार पर उनके चरित और चरित्र की व्यापक, मौलिक तथा निष्पक्ष समीक्षा की चेष्टा की गई है। इन्हीं के आधार पर तीसरे अध्याय में साहित्यिक संस्मरण का विवेचन भी अपना है। 'तरुणोपदेशक', 'सोहागरात' और 'कौटिल्यकुठार' को छोड़कर द्विवेदी जी की अन्य रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। हिन्दी-संसार उनसे परिचित है। उक्त तीनों रचनाओं की खोज अपनी है। यह अधिकार के साथ कहा जा सकता है कि इनके अतिरिक्त द्विवेदी जी ने कोई अन्य पुस्तक नहीं लिखी। चौथा अध्याय कविता का है। द्विवेदी जी की कविता ऊँची कोटि की नहीं है। इसीलिए इस अध्याय में अपेक्षाकृत कम गवेषणा, ठोसपन और मौलिकता है। छन्द, विषय, शब्द और अर्थ की विविधि दृष्टियों से तथा द्विवेदी जी की ही काव्य-कसौटी पर उनकी कविता की समीक्षा इस अध्याय की मौलिकता या विशेषता है। पाचवें अध्याय मे समालोचना की विभिन्न पद्धतियों की दृष्टि से आलोचक द्विवेदी की आलोचना सर्वथा स्वतंत्र गवेषणा और चिन्तन का फल है।

निबन्धकार द्विवेदी पर भी पूर्वोक्त रचनाओं तथा पत्रपत्रिकाओं में फुटकर लेख लिखे गए थे किन्तु वे प्रायः वर्णनात्मक थे। प्रस्तुत ग्रन्थ के छठे अध्याय में सौन्दर्य, इतिहास और व्यक्तित्व के आधार पर द्विवेदी जी के निबन्धों की छानबीन की गई है यह भी अपनी

गवेषणा है। 'सरस्वती-सम्पादन' नामक सातवें अध्याय मे द्विवेदी-सम्पादित 'सरस्वती' के आन्तरिक सौन्दर्य और उसकी उत्तमर्ण तथा अधमर्ण मराठी,बंगला, अंग्रेजी एवं हिन्दी-पत्रिकाओं की तुलनात्मक समीक्षा के आधार पर द्विवेदी जी की सम्पादनकला का मौलिक विवेचन है। 'भाषा और भाषासुधार'-अध्याय अपेक्षाकृत अधिक खोज का परिणाम है। अभी तक हिन्दी के आलोचक सामान्यरूप से कह दिया करते थे कि हिन्दी-गद्यभाषा के संस्कार और परिष्कार का प्रधान श्रेय द्विवेदी जी को ही है। 'द्विवेदी-मीमांसा' में एक संशोधित लेख भी उद्धृत किया गया था। परन्तु, स्वयं द्विवेदी जी की भाषा आरम्भ में कितनी दूषित थी, उन्होंने अपनी भाषा का भी परिमार्जन किया, दूसरों की भाषा की ईदृक्ता क्या थी, उनकी भ्रष्ट भाषा का सुधार द्विवेदी जी ने किन किन विभिन्न उपायों और कितनी कष्टसाधना से किया, उनके द्वारा परिमार्जित भाषा का विकास किन विभिन्न रीतियों और शैलियों मे फलित हुआ, आदि बातों पर व्याकरणरचनासंगत वैज्ञानिक गवेषणा और सूक्ष्म विवेचन की आवश्यकता थी। आठवें अध्याय में इसी कमी की पूर्ति का मौलिक प्रयास है।

नवाँ तथा अन्तिम अध्याय 'युग और व्यक्तित्व' का है। हिन्दी के इतिहासकारों ने हिन्दी-साहित्य के एक युग को द्विवेदीयुग स्वीकार कर लिया था। किन्तु उसके निश्चित सीमानिर्धारण पर कोई प्रामाणिक समालोचना नहीं लिखी गई। डा० श्रीकृष्ण लाल का ग्रन्थ 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास' प्रायः द्विवेदीयुगीन साहित्य की ही समीक्षा है। उसकी दृष्टि भिन्न है। प्रस्तुत ग्रन्थ के अन्तिम अध्याय की अपनी मौलिक विशेषता है। इसमें द्विवेदीयुग का कालनिर्धारण करके ही सन्तोष नहीं कर लिया गया है, उसकी प्रामाणिक समीक्षा भी की गई है। द्विवेदी जी अपने युग के साहित्य के केन्द्र रहे हैं और उस युग के प्रायः सभी महान् साहित्यकार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उनसे अनिवार्य रूप से प्रभावित हुए हैं। उस युग के हिन्दी-साहित्य के सभी अंगों के भाव या अभावपक्ष पर द्विवेदी जी की छाप है। द्विवेदीयुगीन साहित्य के समालोचन की यह दृष्टि ही इस निबन्ध की प्रमुख विशिष्टता है। यहाँ पर एक बात स्पष्टीकार्य है। मनुष्य ईश्वर की भाँति सर्वत्रव्यापक नहीं हो सकता। अतएव द्विवेदी जी का व्यक्तित्व भी हिन्दी-साहित्य-संसार के प्रत्येक परमाणु में व्याप्त नहीं हो सका है। 'युग और व्यक्तित्व' अध्याय पढ़ते समय कहीं कहीं ऐसा प्रतीत होने लगता है कि जब हिन्दी-संसार में इस प्रकार की कलासृष्टि हो रही थी तब द्विवेदी जी क्या कर रहे थे? उत्तर स्पष्ट है। द्विवेदी जी का प्रभाव सर्वत्र सामान नहीं है। कविता, आलोचना, भाषा आदि के क्षेत्र मे उन्होंने कायाकल्प किया है, उपन्यास-कहानी की कुछ व्यापक प्रवृत्तियों पर ही उनका प्रभाव पड़ा है और नाटक के अभाव पक्ष में ही उनके व्यक्तित्व की मुख्ता है, उसके भावपक्ष में नहीं जिस अंग में और जहाँ

पर उनका प्रभाव विशिष्ट नहीं है वहा पर भी उसे दिखाने का बरबस प्रयास इस ग्रन्थ म नहीं किया गया है उस युग क महान् साहित्यकारों म भा कुछ मौलिकता थी और उन्हें उसका श्रेय मिलना ही चाहिए। डा० श्रीकृष्ण लाल के उपर्युक्त ग्रन्थ में उस काल के हिन्दी-प्रचार, सामयिक साहित्य और आलोचना की पद्धतियों आदि की भी कुछ विशेष विवेचना नही की गई थी। इस दृष्टि से भी स्वतंत्र गवेषणा और विवेचन की अपेक्षा थी। उसकी पूर्ति का प्रयास भी प्रस्तुत ग्रन्थ मे किया गया है।

सुना है कि राजपूताना विश्वविद्यालय में द्विवेदी जी की कविता पर कोई प्रबन्ध दाखिल हुआ है। वह बाद की कृति है। उसकी चर्चा आगामी आवृत्ति में ही हो सकेगी।

ग्रन्थ से संयुक्त शुद्धिपत्र संक्षिप्त है। टाइप की अपूर्णता के कारण मराठी के 'किरकोल' आदि शब्द अपने शुद्धरूप में नहीं छप सके। 'ब' और 'व', 'ए' और 'ये', अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु, विरामचिह्न, पंचमवर्ण, संयोजक चिह्न, शिरोरेखा आदि की अशुद्धियाँ बहुत हैं। वे भ्रामक नहीं हैं अतएव उनका समावेश अनावश्यक समझा गया। जिन महानुभावों ने इस ग्रन्थ के प्रणयन में अमूल्य सहायता देकर लेखक को कृतकृत्य किया है उन सब का वह हृदय से आभारी है।

उदयभानु सिंह

विषय-सूची

पहला अध्याय

भूमिका (१—३३)

दूसरा अध्याय

चरित और चरित्र (३४—६१)